International Conference on
"Education, Humanities, Business Management,
Engineering, Sciences and Agro-ecology"
(EHBSA-2019)

मुस्लिम महिलाओं के समक्ष सामाजिक चुनौतियाँः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

शाईस्ता परवीन* और प्रो. हिमांशु बौड़ाई**
*शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग, हे.न.ब.ग.विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल
**प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, हे.न.ब.ग.विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल
E-mail: pshaista14@gmail.com

सारांश—*भारत एक विकासशील देश है एवं किसी भी देश के लिए जनशक्ति का विशेष महत्व होता है, जिसमें स्त्री व पुरूष दोनों सम्मिलित है क्योंकि ये दोनों समाज का अपरिहार्य अंग हैं। यदि किसी भी देश को विकसित करना है तो सबसे पहले महिलाओं का विकास करना होगा, क्योंकि महिला ही समाज की जननी होती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद मुस्लिम महिलाओं को भी समान अधिकार प्राप्त हुआ परन्तु आम धारणा है कि इन महिलाओं का सामाजिक पक्ष इस्लाम की कुछ निजी व अपरिवर्तनीय विशेषताओं का मोहताज है या उनका कानूनी पक्ष केवल मुस्लिम कानून पर आधारित है। इस धारणा के कारण मुस्लिम महिलाओं को भारतीय समाज में एक अलग वर्ग की तरह देखा जाता है जो उनकी सांस्कृतिक रूढ़िबद्धता को पुर्नस्थापित करके समकालीन सच्चाईयों को धुंधला कर देती हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में इस वास्तविकता को जानने का प्रयत्न किया गया है कि मुस्लिम महिलाओं के समक्ष सामाजिक चुनौतियाँ क्या हैं जो उनको मुख्य धारा में जोड़ने से रोकती हैं तथा उनका समाधान क्या है?*

मूल शब्द : मुस्लिम महिलाएं, सामाजिक चुनौतियाँ, स्वतंत्रता

प्रस्तावना–

भारत में मूलतः मुस्लिम महिलाओं की समस्याएं भी अन्य महिलाओं की समस्याओं की भाँति सामाजिक पृष्ठ भूमि में देखी जा सकती है। मुस्लिम कानून के द्वारा यद्यपि स्त्री तथा पुरुषों को समान सामाजिक अधिकार दिये गये हैं, लेकिन व्यवहार में मुस्लिम समाज में ऐसे सभी अधिकार अर्थहीन हैं। मुस्लिम सामाज में महिलाओं की स्थिति लगभग सभी क्षेत्रों में पुरुषों के अधीन है। समाज में जो निर्णय लिए जाते हें, उनमें महिलाओं की इच्छाओं का कोई महत्व नहीं होता। कोई भी महिला कितनी भी कार्यकुशल क्यों न हो, उससे यह आशा की जाती है कि वह अपना सम्पूर्ण समय बच्चों के पालन–पोषण और घरेलू कार्य में ही व्यतीत करे। आजादी के 70 वर्ष पूरे होने के बाद भी मुस्लिम महिलाएँ अपने समुदाय में भारत के नागरिक के रूप में और भारत के सबसे बडे अल्पसख्यक समुदाय के सदस्य के रूप में अत्यधिक चुनौतियों का सामना कर रही हैं और दयनीय परिस्थिति में रह रही हैं। सर्वाधिक दुर्भाग्यपूर्ण बात तो यह है कि वे अपनी हानि को महसूस भी नहीं कर सकती हैं उन्हें पता ही नहीं कि कुरान में उन्हें किस प्रकार का स्थान दिया गया है। इससे भी त्रासदीपूर्ण बात तो यह है कि मुस्लिम महिलाओं ने नियति मानकर अपनी स्थिति और भूमिकाओं को स्वीकार कर लिया है जो उनके लिए पुरूष सत्तात्मक समाज ने नियत की है।

अशिक्षा –

शिक्षा समाज की एक सार्वभौमिक आवश्यकता तथा प्रगति का द्वार है, और इसमें कोई संदेह नही है कि मुस्लिम महिलाएँ अभी इस द्वार की दहलीज तक नही पहुंच पायी है। आंकडे बताते हैं कि मुस्लिमों में व्यापक निरक्षरता व्याप्त है, उनमें शिक्षा का स्तर और गुणवत्ता दोनों ही निम्न है।[1] यदि वर्ष 2011 की जनगणना का आंकलन किया जाए तो देश की कुल साक्षरता दर 74.04 प्रतिशत थी, पुरुष साक्षरता दर 82.14 प्रतिशत, जबकि महिला साक्षरता दर 64.46 प्रतिशत थी। सात वर्ष से ज्यादा आयु वर्ग के मुस्लिमों में साक्षरता दर 57.28 प्रतिशत तथा मुस्लिम महिलाओं की साक्षरता दर 38.40 प्रतिशत थी। 2011 की जनगणना के अनुसार मुस्लिमों की कुल आबादी का 2.75 प्रतिशत हिस्सा स्नातक या उससे अधिक शिक्षित है, जिसमें मुस्लिम महिलाओं की भागीदारी 36.65 प्रतिशत है।[3] 14 साल की उम्र के 25 प्रतिशत मुस्लिम बच्चे स्कूली शिक्षा से वंचित हैं। अतः मुस्लिम महिलाओं की शिक्षा में निम्न स्थिति भी इनकी प्रमुख चुनौतियों में से एक है।

स्वतन्त्रता के पश्चात भारत में शिक्षा का प्रसार तीव्र गति से हो रहा है। मुस्लिम समाज भी इसके प्रभाव से अछूता नहीं है। अधिक परम्परागत व अतिकट्टर मानसिकता होने के कारण मुस्लिम समाज में शिक्षा का प्रभाव अन्य भारतीय समाजों की अपेक्षा कुछ कम दृष्टिगोचर रहा है। इस्लामिक संस्कृति भले ही कितनी गतिशील हो अब भी परिवर्तन के विरुद्ध रुढ़िवाद एवं अपनी पुरानी मूल व्यवस्था को बनाये रखने का प्रयास करती है। अतः मुस्लिम महिलाओं की शिक्षा में निम्न स्थिति भी इस समुदाय की एक बडी चुनौती है। वर्तमान शिक्षा पद्धति मुस्लिम महिलाओं के लिए बाधक है, इनकी वजह से दाखिला और पढ़ाई जारी रखने की दर अत्यधिक कम है। इस निराशजनक स्थिति में आशा की किरण है कि लड़कियां स्वयं पढ़ना चाहती हैं। सभी बोर्ड में मुस्लिम लड़कियों में शिक्षा के प्रति लगन और उत्साह दिख रहा है। आमतौर पर आसपास कम स्कूल होने की वजह से मां बाप के पास बच्चों की पढ़ाई के दो ही विकल्प बचते हैं महंगे निजी स्कूल या मदरसे। पूरे समाज में लड़कियां उपेक्षा का शिकार होती हैं, क्योंकि गरीबी या अन्य वजहों से सिर्फ लड़कों को ही निजी स्कूलों में पढ़ाई के लिए भेजा जाता है। इसलिए मुस्लिम महिलाओं की अशिक्षा का कारण सिर्फ रूढिवादिता नही, बल्कि गरीबी और सामाजिक मजबूरी भी है, जिस कारण वे आधुनिक व धर्म निरपेक्षय शिक्षा से वंचित हैं। स्कूल में नामांकन या छात्रवृत्रि के समय मुस्लिम महिलाएं प्रशासनिक भेद–भाव का शिकार होती हैं। बढ़ते सांप्रदायिक झगड़ों की वजह से असुरक्षा की भावना के शिकार मुस्लिम माता पिता सार्वजनिक यातायात का उपयोग कर अच्छे स्कूल में लड़कियों को भेजने में संकोच करते हैं। ऐसा अक्सर प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद होता है। जिससे लड़कियों के पढ़ाई छोड़ने की दर बढ़ जाती है। सरकारी स्कूल में उर्दू के खिलाफ व्यवस्थित रूप से भेद भाव भी उनके पढ़ाई से दूर होने के प्रमुख कारणों में हैं। अधिकतर राज्यों के स्कूल कोर्स से उर्दू को हटा लिया गया है, इसलिए मां बाप अपने बच्चों को मदरसे में भेजना अधिक पसंद करते हैं। महिलाओं की पहचान परंपरा निभाने वाली के रूप में होने और उनके नौकरियों से दूर रहने के कारण भी ऐसा अधिक होता है।कुछ लोग उर्दू की शिक्षा को संस्कृति से जोडकर देखते हैं, इसलिए लड़कियों को उसका पोषक

ISBN: 978-93-85822-84-1

माना जाता है। इसके अलावा नियमित शिक्षा से नौकरी पाने की कम उम्मीद होने के चलते इसे प्राथमिकता नहीं दी जाती।

असुरक्षा की भावना –

भारत में अनेक धर्म के लोग रहते है जहाँ प्रत्येक को अपने धर्म पालन की स्वतंत्रता है परन्तु यह भी सत्य है कि धर्म के नाम पर देश का विभाजन हो चुका है तथा आज भी धार्मिक अलगाव अपने पैर पसारे हुऐ है। इसके साथ ही विगत घटी कुछ घटनाओं से मुस्लिम महिलाओं के मन में असुरक्षा की भावना घर कर गयी है वह अनजाने भय से स्वयं को ग्रसित पाती हैं।[2] कट्टर, धर्मान्ध व साम्प्रदायिक होने के दोषारोपण के कारण अन्य धार्मिक समाजों में इसकी स्वीकार्यता आज भी संदिग्ध है। इस कारण इस समुदाय के साथ घटित छोटी–मोटी घटनाएं साम्प्रदायिक तनाव का रूप ले लेती हैं जिसकी भागी अन्य महिलाओं की तरह मुस्लिम महिलाएं होती हैं। मुस्लिम महिलाओं को आसानी से पहचान लिये जाने के कारण वे ही साम्प्रदायिक तनाव के सबसे ज्यादा असुरक्षित एवं निशाने पर रहती हैं। प्राय ऐसा देखा गया है कि मुस्लिम समाज के समक्ष जमीन खरीदना व घर बनाना तक कठिन कार्य है क्योंकि असुरक्षा के कारण वे उन्ही जगहों पर घर बसाने हेतु विवश हैं जहाँ पर कि मुस्लिम आबादी निवास करती हो।

पर्दा प्रथा–

मुस्लिम महिलाओं के सामने पर्दा प्रथा भी महत्वपूर्ण चुनौती है। मुस्लिम परिवारों में पर्दा को एक महत्वपूर्ण सामाजिक मूल्य के रूप में देखा जाता है इसके फलस्वरूप स्त्रियाँ घर के बाहर पर्दे में नहीं रहती बल्कि परिवार के अंदर भी उनसे पर्दा के नियम के पालन की आशा की जाती है। साधारणतया प्रत्येक मुस्लिम परिवार में स्त्रियों के स्थान को जनानखाना और पुरूषों के स्थान को मर्दानखाना कहा जाता है। इस नियम का उल्लंघन तभी होता है जब आर्थिक साधनों का अभाव होने के कारण इतने स्थान की व्यवस्था नही की जा सकती है।[3]

मुस्लिम महिलाओं में पर्दे की प्रथा भी बहस का मुद्दा बनती रही है। इसके संबंध में प्रायः अतिवादी रवैया अपनाया जाता रहा है। कुछ लोग पर्दे का नितांत विरोध करते दिखाई देते हैं तो कुछ लोग पर्दे के पूरे समर्थन में खड़े दिखाई देते हैं। इस संबंध में इस्लाम का दृष्टिकोण है कि हिजाब या पर्दा इस्लाम में महिलाओं पर बंदिश या पाबंदी के रूप में नहीं रखा गया है। यह इस्लाम के आदेशों पर अमल करने का उत्साह रखने वाली महिलाओं की पसंद और अधिकार का विषय है। वे पर्दे में अपना मान–सम्मान और मर्यादा सुरक्षित महसूस करती हैं। पर्दे में वे न केवल मौसम के दुष्प्रभाव और प्रदूषण से स्वयं को बचा पाती है बल्कि यौन हिंसा और छेड़खानी से भी सुरक्षित रहती हैं। इन्हीं उद्देश्यों से इस्लाम ने महिलाओं को पर्दे का आदेश दिया है। मुस्लिम महिलाएं पर्दे में रहकर शिक्षा, अध्यापन, नौकरी और व्यापार आदि के अवसरों का पूर्ण लाभ उठाना चाहती हैं। वे अपनी क्षमताओं का भरपूर उपयोग करके परिवार, समाज और देश की उन्नति में अपना हाथ बंटाना चाहती हैं। पर्दा महिलाओं का अपना व्यक्तिगत निर्णय होता है।[4]

बाल–विवाह–

बाल–विवाह का प्रचलन सभी धर्म के लोगों में देखने को मिलता है। हिन्दू और मुस्लिम दोनो ही समुदाय में बाल–विवाह के आँकडे समान है। 2011 की जनगणना के अनुसार 30.2 प्रतिशत लड़कियों का विवाह 18 वर्ष से

ISBN: 978-93-85822-84-1

पहले कर दिया गया जबकि 2001 में यह आँकडा 43.5 प्रतिशत था। 2011 की जनगणना के अनुसार यह आँकडा 31.3 प्रतिशत हिन्दू लड़कियों में जबकि 30.2 प्रतिशत मुस्लिम लड़कियों में था।[5]

मुस्लिम समाज में प्राचीन समय से ही बाल–विवाह का प्रचलन रहा है और यह कुप्रथा आज भी कई मुस्लिम परिवारों में देखने को मिलती है यह प्रथा उनकी स्वतन्त्रता का द्योतक है। जो कि उनका बचपन उनसे छीन लेता है और कर्तव्यों को कभी न समाप्त होने वाला बोझ उन पर डाल दिया जाता है। कम आयु में विवाह होने, सन्तान होने एवं पारिवारिक दायित्व आ जाने के कारण इन महिलाओं का स्वास्थ्य गिर जाता है। परिणाम स्वरूप उनकी मृत्यु–दर बढ़ जाती है व औसत–जीवन अवधि घट जाती है बाल–विवाह एवं जीवन–साथी के चुनाव की स्वतन्त्रता न होने के कारण कई बार मुस्लिम लड़कियों का विवाह अपनी जाति से बाहर किसी अन्य जाति में अनुप्यक्त लड़कों से करवा दिया जाता है जब वर–एवं वद्यु मानसिक घरातल पर एक होने में असमर्थ हो तो उनमें वैचारिक भिन्नता होती है तथा शिक्षा के स्तर एवं सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठ–भूमि में अन्तर हो तो उनका वैवाहिक जीवन सफल नहीं होता है।[6]

दहेज प्रथा–

शैक्षिक पृष्ठ भूमि और आय का स्तर जो भी हो परन्तु सभी जातीयां और समुदाय लंबे समय से दहेज प्रथा अपनाये हुये है। अतः मुस्लिम समाज भी इससे अछुता नही रहा जबकि पवित्र कुरान में दहेज का कोई वर्णन नहीं मिलता है। इस्लाम के वैवाहिक नियमों के अनुसार निकाह के बाद पति द्वारा पत्नी को आर्थिक सुरक्षा के रूप में मेहर दिया जाता है। इस्लामिक तौर–तरीकों में एक अरबी शब्द जाहेज का उपयोग होता है जिसका संबंध शादी से है। इसका अर्थ है कुछ चीजें उपलब्ध कराना जैसे दुल्हन का साज–सामान, मूल्यवान चीजें और गहनें आदि। मुस्लिम धर्म गुरू जाहेज की इजाजत तो देते है पर कुछ हद तक। पिछले तीन दशकों में जाहेज का मतलब दहेज हो चुका है। समय के साथ–साथ दहेज और खर्चीला होता गया और जो दहेज नहीं दे सकते उनके लिए गंभीर समस्या बन गया है। अब्दुल वाहीद ने अपनी शोध "भारतीय मुस्लिमों के बीच दहेज प्रथा" में कहा कि मुस्लिम महिलाएं दहेज प्रथा की शिकार है और उन्हें काफी अधिक उत्पीडन झेलना पडता है। जिसका कारण उन्होने भारतीय मुस्लिमों के रीति–रिवाज, परंपराएं और सामाजिक संस्थाएं 'इस्लामिक' से अधिक भारतीय है, को माना है।[7]

तलाक–

मुस्लिम महिलाओं के समक्ष एक गंभीर चुनौती है ट्रिपल तलाक अर्थात एक श्वास में तीन बार तलाक तलाक तलाक कह दिया ओर तलाक हो गया, इसका असर यकीनी तौर पर मुस्लिम महिलाओं की स्थिति पर होता है। इसकी शिकार अधिकाँश गरीब महिलाएं होती है। जबकि पवित्र कुरान में एक श्वास में तीन बार तलाक बोल देने का कोई वर्णन नहीं मिलता है परन्तु व्यवहारिक तौर कुछ हदीसों का सहारा लेकर धर्म गुरूओं ने इसे उचित ठहराया है और यह मुस्लिम महिलाओं के लिए चुनौती बन कर रह गया है।[8] मुस्लिम समाज में विवाह विच्छेद की प्रचलित इस प्रणाली ने भी मुस्लिम महिलाओं की स्थिति को शोचनीय बना दिया, इससे न केवल मुस्लिम पुरूष को एकाधिक विवाह के अवसर प्राप्त होते है

ISBN: 978-93-85822-84-1

अपितु मुस्लिम महिलाओं के समक्ष जीवन यापन तक संकट उत्पन हो जाता है। अधिकतर मुस्लिम महिलाएं एक श्वास में तीन बार तलाक बोलने को ना केवल कानून विरूद्ध अपितु कुरान शरीफ व हदिसों के हवाले से धर्म विरूद्ध भी मानती है और प्रगतिशील मुस्लिम विचारकों द्वारा भी यह स्पष्ट कर दिया गया है कि ये खुदा द्वारा ना पसन्दीदा चीजों में से सबसे ना पसन्दीदा चीज है। पवित्र कुरान में तलाक का उचित नियम कुछ इस प्रकार से वर्णित है कि यदि पति अपनी पत्नी से अलग होना चाहता है तो उसे दो समझदार लोगों के सामने पत्नी को एक तलाक देना चाहिए अथार्त इतना बोलें "मैं तुम्हें तलाक देता हूँ"। यहाँ ध्यान देने वाली बात यह है कि तलाक केवल एक बार बोली जाए, न कि तीन बार, यह इस्लाम के खिलाफ है। इस एक तलाक के बाद पत्नी तीन माह तक, इद्वत के समय, पति के ही घर रहेगी और उसका खर्च भी पति ही उठायगा, लेकिन उनके बिस्तर अलग होंगें। इससे आशा रहती है कि इन तीन माह में सब कुछ ठीक हो जाए। यदि आपसी सहमती बन जाए तो दोनों एक साथ रह सकते है, इसे "रूजू" करना कहते है। ऐसा केवल वैवाहिक जीवन में दो बार ही किया जा सकता है, इससे अधिक नहीं (सूरह बक्राह, आयत–229)। पति रूजू न करे तो इद्वत का समय पूर्ण होने पर पति–पत्नी का वैवाहिक संबंध समाप्त हो जाएगा।

पितृसत्तात्मकता –

मुस्लिम समाज में महिलाओं की स्थिति इस्लाम की मान्यताओं के दायरे में परिभाषित की जाती हैं। कुरान की आदर्श व्याख्या के अनुसार महिला एवं पुरूष दोनों ईश्वर की संतान है तथा दोनों की स्थिति समान है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाएँ पुरूषों के समान हैं।[9] परन्तु व्यवहार के धरातल पर मुस्लिम महिलाओं की स्थिति अन्य पितृसत्तात्मक समाजों की महिलाओं की भांति ही है और उसका कार्यक्षेत्र घर की चारदीवारी में माना जाता है। तथा पितृसत्तात्मकता महिलाओं को झेलनी पडती है

निर्णय लेने में महिलाओं की भूमिका कमज़ोर उजागर होती है और संसाधनों पर उनका बहुत ही कम नियंत्रण होता है। निर्णय प्रक्रिया से व्यवस्थित इस पितृसत्तात्मक समाज में अभी भी उच्च स्तर पर लैंगिक असमानता विद्यमान है। सामाजिक और आर्थिक रूप में महिलाओं में निर्णय के विकल्प बहुत सीमित होते है। निर्णय लेने का अधिकार हर व्यक्ति को होता है। इसमें महिलाओं का भी अहम स्थान है जो कि हमारे देश की कुल आबादी का लगभग आधा हिस्सा है। निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं की भूमिका उनकी स्वायत्तता या स्वतंत्रता को दर्शाती है निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं की भूमिका प्राकृतिक और सीमित होती है।[10]

पारिवारिक दायित्व

परिवार का उत्तरदायित्व महिला सहभागिता के समक्ष एक बड़ी चुनौती है। मुस्लिम समाज की पितृसत्तात्मकता ने नारी का कार्यक्षेत्र घर की चारदीवारी में निर्धारित किया हुआ है। मुस्लिम महिलाओं के परिवार का आकार प्रायः बड़ा पाया जाता है, वह संयुक्त परिवार को वरीयता देती हैं और उनके पारिवारिक उत्तरदायित्व भी अन्य समाज की महिलाओं की अपेक्षा अधिक हैं। ऐसे में योग्यता एवं क्षमता होने के बावजूद पारिवारिक दायित्वों के निवर्हन में अधिकांश समय व्यतीत होने के कारण मुस्लिम महिलाएं सामाजिक एवं राजनीतिक दायित्वों की दिशा में सोच भी नही पाती।

ISBN: 978-93-85822-84-1

धार्मिक फतवे–

मुस्लिम समाज कट्टर धार्मिक समाज माना जाता है क्योंकि अधिकांश भारतीय मुस्लिम जनता अनपढ़ व गरीब है और जनता के इस वर्ग में रूढ़िवादी व्याख्याकार गहरी पैठ रखते हैं। धर्म के ये पैरोकार समय–समय पर महिलाओं की भूमिका व अधिकारों को सीमित करने वाले फतवे जारी करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं। तथा मुस्लिम महिलाओं के लिए राजनीति को प्रतिबंधित मानते है।[11] जब भी दृढ़ महत्वाकांशी, साहसी, कर्मठ मुस्लिम महिला अपनी योग्यता एवं प्रतीभा के बल पर किसी प्रकार से सामाजिक या राजनीतिक पहचान बनाने का प्रयास करती है तो खुद मुस्लिम समाज ही उसकी सक्रियता के विरूध फतवे जारी करने लगते है तथा नकारात्मक संदर्भ द्वारा उनकी सक्रियता को धर्म विरूध ठहराया जाता है। जबकि इस्लामिक रिसर्च के अनुसार पैगम्बर मुहम्मद साहब की बीबी खदीजा एक सफल कारोबारी तथा उनकी सलाहकार थी।

आर्थिक पराधीनता–

प्रायः मुस्लिम महिलाओं द्वारा अपनी घरेलू आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कोई ना कोई मजदूरी का कार्य किया जाता है। परन्तु उनकी अल्प कमाई घर की आवश्यकताओं को पुरा करने में खत्म होती है तथा वह स्वयं के लिए सोच नही पाती। यह भी एक तथ्य है कि आर्थिक रूप से महिला पुरूष पर आश्रित हैं। यही कारण है कि राजनीतिक एवं सामाजिक क्षेत्र में भी महिला स्वायत्त निर्णय लेने में अक्षम हैं।[12] प्रजातंत्र में किसी भी प्रकार की राजनीतिक एवं सामाजिक सहभागिता के लिए महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता अति आवश्यक है जबकि मुसलमानों में बेरोजगारी का हाल ये है कि अपने ही घरों में काम करने की मुस्लिम महिला कामगारों की प्रतिशतता सभी श्रमिकों की तुलना में बहुत अधिक है, मुसलमानों में यह प्रतिशत 70 है तो सभी श्रमिकों की प्रतिशतता 51 प्रतिशत।[6]

सुझाव –

उपर्युक्त चुनौतियों के समाधान हतु सरकारी व गैर सरकारी दोनों स्तरों पर गभीर प्रयास करने होगें। सरकार द्वारा जहाँ उन्हें शिक्षा हेतु छात्रवृत्ति प्रदान करनी होगी वहीं उनकी प्रगति में बाधक बने तत्वों का निवारण करना होगा। सरकारी नौकरियों में उनकी भागीदारी बढ़ाने हतु पर्याप्त प्रयास की आवश्यकता है। महिला शिक्षा हेतु मुस्लिम बहुल क्षेत्रों में विद्यालयों व महाविद्यालयों की स्थापना करनी होगी जिससे रूढ़िवादी दृष्टिकोण को समाप्त किया जा सके। गैर सरकारी स्तर पर मुस्लिम समुदाय के अन्दर से ही प्रगतिशील राष्ट्रवादी मुस्लिमों को आगे आना होगा। वे स्वंय इस अल्पसख्यक वर्ग में अल्पसख्या में हैं किन्तु उन्हें अपनी शक्ति सगंठित कर, मुस्लिम समाज को दिशा प्रदान करनी होगी। ये उनका कर्तव्य है कि वे अपने धर्म की सही व्याख्या लोगों तक पहुचांऐं। उन्हें सामाजिक, विधिक, शैक्षिक आदि सुधारों के दायित्व का निवर्हन करना हागेा। उन्हें मुस्लिम महिलाओं की हर क्षेत्र में भागीदारी को प्रोत्साहित करना होगा।

निष्कर्ष–

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि मुस्लिम महिलाओं की चुनौतियाँ सैधान्तिक नहीं वरन व्यवहारिक हैं। मूलतः मुस्लिम सामाज का आधार कुरान है। कुरान के विस्तृत अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि कुरान में महिलाओं को पूर्णतः स्वतन्त्रता व पुरुष के समान ही अधिकार प्रदान किये गये है। समस्या यहाँ से प्रारम्भ होती है कि

ISBN: 978-93-85822-84-1

समय–समय पर धर्म गुरूओं के द्वारा कुरान की गलत व्याख्या करके अपने द्वारा धार्मिक नियमों का निर्माण किया गया। ये नियम आज भी मुस्लिम सामाज को जकडे हुए है और जिन नियमों का निर्माण महिलाओं को पुरुष के समान न रख करके दूसरे स्तर पर रखते है। ये नियम आज भी एक चुनौती है जिससे महिला समाज को मुक्त करना न केवल आवश्यक है अपितु उन धारणओं का विरोध करना है जिन्हें धर्मावलम्बीयों ने अपने स्वार्थ के लिए निर्मित किया है।

मुस्लिम समाज के शिक्षित व्यक्तियों के आगे धार्मिक बंधन शिथिल पड़ गये हैं। शिक्षा प्राप्ति के लिए धार्मिक कुठांओं को पीछे छोड़ता हुआ एक बड़ा वर्ग सामने आ गया है। जिन मुस्लिम परिवारों में 2–3 दशक पहले पर्दे का अधिक चलन था वहां अब पर्दा नाममात्र को रह गया है। बदलते परिवेश में मुस्लिम महिलाएं अकेले भी यात्रा करती है और अपने कैरियर के चुनाव के लिए पूर्ण स्वतंत्र है। नौकरियों में भी बड़े शहरों एवं महानगरों में सरलता से अब मुस्लिम समाज की लड़कियों ने प्रवेश किया है। उनके माता–पिता की तरफ से उन्हें अपना व्यवसाय करने की स्वतंत्रता है। पुरूष वर्ग के भी व्यवहार में पूर्णतः बदलाव देखा जा रहा है। जो पुरूष अपनी शिक्षित पत्नी को भी पूर्ण पर्दे में रखते हैं वह भी अपनी बेटी के लिए कोई पर्दे का बंधन नहीं चाहते। इन सभी बातों से धर्म का बंधन शिक्षित और उच्च वर्ग में शिथिल दिखाई देता है। इन परिवारों के मुखिया अपने परिवार के लिए तो पूर्ण बदली हुई मानसिकता रखते हैं। परंतु समाज में वह धार्मिक विचारधारा को ही प्रदर्शित करते हैं। यद्यपि वे धार्मिक विचार रखते हैं परंतु शिक्षा प्राप्ति के लिए एवं रोजगार प्राप्ति के लिए अपने पुत्र–पुत्रियों पर किसी प्रकार का बंधन नहीं रखते हैं। उन्हें परिवार से पूर्ण स्वतंत्रता मिली होती है जिससे इन माता–पिता की दोहरी भूमिका दिखाई पड़ती है। कहीं उनकी मानसिकता रूढ़िवादी होती है और कहीं प्रगतिवादी। जबकि निम्न व मध्यम वर्ग के मुस्लिम परिवार अशिक्षा एवं धार्मिक बन्धनों के कारण अपनी स्त्रियों को पूर्ण स्वतंत्रता नहीं देते। उनको नौकरी, व्यवसाय आदि की पूर्ण छूट नहीं रहती। इस वर्ग की मानसिकता अभी पूर्णतः बदली नहीं है। इस वर्ग में अभी पर्दा प्रथा का चलन है।

अतः इस बात को हमें स्वीकार करना चाहिए कि मुस्लिम महिलाओं की सोच में परिवर्तन साफ–साफ नजर आता है। अतः इस अध्ययन से ज्ञात होता है कि मुस्लिम घरेलू महिलायें अपनी सोच अपने रहन सहन में परिवर्तन चाहती है। अतः परम्परा, रूढ़ियों प्रथाओं के स्वरूप उसी तरह है उसमें परिवर्तन नहीं है परन्तु परिवार के स्वरूप में परिवर्तन आया है। शिक्षा व्यवस्था, सामाजक व्यवस्था, राजनीतिक, धार्मिक आस्था आदि में बहुत कम परिवर्तन देखने को मिलता है। इस कारण इसकी वर्तमान समस्याओं में कमी आयी है तथा मुस्लिम महिलाओं की पारिवारिक स्थिति में सुधार आ रहा है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची–

1. सच्चर कमेटी, नई दिल्ली, 2006, पृ.सं. 46
2. सच्चर कमेटी, नई दिल्ली, 2006, पृ.सं. 13
3. शुक्ला, अंजू, मुस्लिम समाज में महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थितिः एक समाजशास्त्रीय अध्ययन, *Research magma* 2017
4. वासे, अख्तरूल, इस्लाम में महिला अधिकार, *हम सबला*, मई–जून 2009
5. समसामयिक घटनासार, *जनसंख्या नगरीकरण* (2011)

ISBN: 978-93-85822-84-1

6. युसुफ, तरन्नुम, भारतीय मुस्लिम महिलाओं का सामाजिक अध्ययन, *Innovation the Research concept*, 2017
7. वाहीद, अब्दुल, भारतीय मुस्लिमों के बीच दहेज प्रथा, *इंडियन जरनल ऑफ जेंडर स्टडीज, सेज पब्लिकेशन,*
8. बानू, जेनब, मुस्लिम समाज, महिलाएं एवं मानवाधिकारों का प्रश्न, *पंचशील प्रकाशन, जयपुर,* 2005 पृ.सं. 106
9. कौशिक, सुरेन्द्र नाथ, भारतीय उपमहाद्वीप में मुस्लिम महिलाओं के मानवाधिकारः सिद्धान्त एवं व्यवहार, *पंचशील प्रकाशन जयपुर,* 2005, पृ.सं. 87
10. खातून, आरिफा मुस्लिम महिलाओं की निर्णय स्वतंत्रताः प्रतिरोध का स्परूप, *स्त्रीकाल शोध पत्रिका*, 2017
11. सिन्हा, ध्रुवनारायण, सशक्तिकरण की राह पर मुस्लिम महिला, *राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली,* 2010, पृ.सं. 133
12. जैन, मंजू, कार्यशील महिलाएं एवं सामाजिक परिवर्तन, *प्रिन्टवैल, जयपुर,* 2009, पृ.सं. 88

ISBN: 978-93-85822-84-1